Anveshan (अन्वेषण): A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 2, Issue 1 – 2018

स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता

अवधेश कुमार*

भूमिका

शिक्षा वह प्रकिया है, जो जीवन पर्यन्त चलती रहती है तथा बालकों में अच्छी आदतों तथा नैतिकता का विकास करते हुये उनके व्यक्तित्व के विकास में सहायक होती है यह विकास स्वामी जी के अनुसार उनमें विद्यमान शक्तियों पर आधारित होता है। उनके अनुसार वह शक्तियाँ जो मानव के विभिन्न गुणों को विकसित करती है। यह शक्तियाँ प्रत्यक्ष रुप से नही आती है परन्तु यह मनुष्य में छिपी रहती है। इस प्रकार उनके अनुसार सभी प्रकार का लौकिक–अलौकिक ज्ञान आत्मा में निहित रहता है,जो कि शिक्षा के द्वारा ही प्रस्फुटित होता है जैसे कि गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त 'न्यूटन' के मस्तिष्क में पूर्व से ही विद्यमान था, लेकिन समय आने पर इसकी खोज की उनके अनुसार सीख वास्तव में खोज करना है, जो कि उसके ज्ञान कोष में विद्यमान है।

दर्शनशास्त्र शिक्षा पर प्रभाव डालता है और शैक्षिक विचार धाराएँ दार्शनिक पर नियंत्रण रखती हैतथा उनकी त्रुटियों को दूर करती है। यही कारण है कि उच्चकोटि के शिक्षा शास्त्री हुये है। उनका दार्शनिक दृष्टिकोण शैक्षिक विचारधारा के साथ–साथ चलता है। 'प्लेटो' जिन्हें हम एक विचारक मानते है। शिक्षा के लिये आदर्शों की सांस्कृतिक योजना का प्रतिपादन किया है स्पेंसर जो कि एक भोगवादी विचारक था उसने शिक्षा में प्रकृतिवाद को उच्च स्थान दिया। इसी प्रकार जान लाक की भी शिक्षा सम्बन्धी विचारधारा आवश्यक रूप में उनके दार्शनिक दृष्टिकोण पर आधारित थी।

आज इस बात की अत्यन्त आवश्यकता व प्रासंगिकता बन पड़ी है कि आध्यात्मिक पहलुओं से जुड़े शिक्षा शास्त्रियों के शैक्षिक विचारों को कमबद्व रूप प्रदान किया जाय तथा उनका तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया जाय, आधुनिक सदी के महान् विचारक एवं शिक्षा मनीषियों में सहृदय स्वामी विवेकानन्द का एक स्वतन्त्र चिन्तक एवं विचारक के रूप में महत्वपूर्ण स्थान नियत है।

"मनुष्य में अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति ही शिक्षा है।"

विवेकानन्द

विवेकानन्द जी ने बालक को वीर, निर्भर तथा कर्मनिष्ठ बनने पर बल दिया है जो कि शिक्षा के द्वारा ही संभव है। उनके चिन्तन के अनुसार भीरू, म्लान तथा उदासीन व्यक्ति जीवन में कोई कार्य नहीं कर सकता, इन सबका प्रभाव देश तथा समाज पर पड़ता है। अतः देश के निर्माण तथा उन्नति हेतु बालकों में त्याग तथा धार्मिक एवं नैतिक गुणों के विकास के साथ–साथ भय मुक्त धार्मिक समाज की संरचना हेतु बालकों को शिक्षा उनके चिन्तन के आधार पर प्रदान की जानी चाहिये।

*शोध–छात्र, शिक्षक शिक्षा संकाय, नेहरु ग्राम भारती विश्वविद्यालय, जमुनीपुर, कोटवा, इलाहाबाद।
Correspondence E-mail Id: editor@eurekajournals.com

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved.
ISSN: 2581-4044

अत: स्वामी जी ने प्रचलित शिक्षा के स्थान पर उस शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया है, जिससे बालक का चरित्र निर्माण एवं मानसिक तथा बौद्धिक विकास हो तथा आत्म निर्भरता की ओर अग्रसर हो उन्होंने सैद्धान्तिक पक्ष के साथ–साथ व्यवहारिक पक्ष पर अधिक बल दिया है क्योंकि उचित शिक्षा के द्वारा ही देश का भविष्य सुरक्षित रह सकता है।

स्वामी विवेकानन्द का जीवन परिचय

स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म 12 जनवरी सन् 1863 ई0 को कलकत्ता में हुआ था। उनके बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था उनके पिता विश्वनाथ दत्त कलकत्ता हाईकोर्ट के एक प्रसिद्ध वकील थे। वे अपने पुत्र नरेन्द्र को भी अंग्रेजी पढ़ाकर पाश्चात्य सभ्यता के ढर्रे पर चलाना चाहते थे परन्तु उनकी माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों की महिला थीं। उनका अधिकांश समय भगवान शिव की पूजा अर्चना मे व्यतीत होता था। दैव योग से विश्वनाथ दत्त की मृत्यु हो गयी। घर का भार नरेन्द्र पर आ पड़ा। घर की दशा बहुत खराब थी। अत्यन्त दरिद्रता में भी नरेन्द्र बड़े अतिथि प्रेमी थे, वे स्वयं भूखे रहकर अतिथि को भोजन कराते। स्वयं बाहर वर्षा में रात भर भीगते– ठिठुरते पड़े रहते और अतिथि को बिस्तर पर सुला देते।

नरेन्द्रनाथ के गुरू का नाम रामकृष्ण परमहंस था। इनके शरीर त्याग के दिनों में अपने घर और कुटुम्ब की नाजुक हालत व स्वयं के भोजन की चिन्ता किये बिना वे गुरू की सेवा में सतत् संलग्न रहे। सन् 1887 में नरेन्द्रनाथ ने सन्यास ग्रहण कर लिया तथा सन् 1888 ई0 में परिव्राजक के रुप में भ्रमण के लिये निकल पड़े। खेताड़ी के राजा के सुझाव पर इन्होंने अपना नाम स्वामी विवेकानन्द रख लिया।

स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका स्थित शिकागों में सन् 1893 ई0 में आयोजित विश्वधर्म सभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। उन्हें प्रमुख रुप से उनके भाषण की शुरुआत "मेरे अमेरिकी भाईयों और बहनों" के साथ करने के लिए जाना जाता हैं। उनके संबोधन के इस प्रथम वाक्य ने सबका दिल जीत लिया था। उन्होंने 1 मई 1897 ई0 को रामकृष्ण मिशन की स्थापना की जो आज भी अपना काम कर रहा है।

स्वामी जी का विपुल साहित्य सन् 1963ई0 में उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित हुआ जिनमे ज्ञान योग, राज योग, प्रेम योग, कर्म योग, धर्म विज्ञान, धर्म तत्व, वेदान्त आदि कृतियाँ हैं।

जीवन के अन्तिम दिनों में उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद की व्याख्या की और कहा एक और विवेकानन्द चाहिए यह समझने के लिये कि इस विवेकानन्द ने अब तक क्या किया है।

4 जुलाई 1902 को विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरू का देहावसान हो गया।

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों की वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिकता

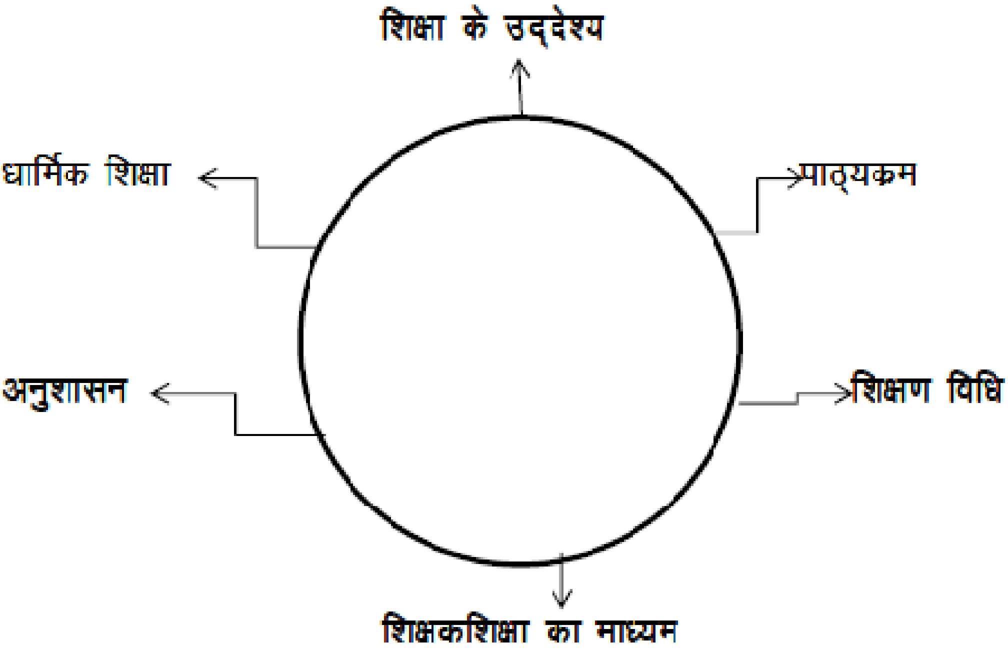

शिक्षा का अभिप्राय

स्वामी जी ने शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया है और भारत की निर्धनता एवं पतन का कारण एक मात्र अशिक्षा को बताया है। यूरोप के अन्य नगरों का भ्रमण करते हुये उन्हें शिक्षा की भौतिक उपलब्धियॉं भी दिखाई पड़ी। स्वामी जी तत्कालीन शिक्षा प्रणाली से दुःखी थे। उनका विचार था कि उस समय की शिक्षा मनुष्य का वास्तविक विकास नही करती थी। वह शिक्षा को मात्र सूचना तक नहीं सीमित करना चाहते थे तमाम असमबद्ध जानकारियों को एक गठरी में ठूस लेने से कोई लाभ नहीं सूचना का अपने आप में कोई महत्व नहीं जो विचार जीवन निर्माण में सहायक हो उनकी अनुभूति करना आवश्यक है।

स्वामी जी के अनुसार केवल कुछ विचारों को रटकर डिग्री प्राप्त कर लेना शिक्षा नहीं है। स्वामी जी के अनुसार बालक का जब जन्म होता है तब वह आध्यात्मिक एवं भौतिक दृष्टि से दोनों ही अन्तःकरण में किसी न किसी स्थान पर अव्यवस्थित सा बिखरा रहता है। जब किसी विशेष अवसर पर यह अव्यवस्थित और बिखरा हुआ ज्ञान आवरण हटने के साथ–साथ प्रकाशित होने लगता है तब हम यह कहते हैं कि मनुष्य ज्ञानी है। ज्ञान सदैव मनुष्य के मन में निहित है। स्वामी जी शिक्षा के अर्थ के समबन्ध में रूसो से सहमत थे। जिस प्रकार पौधा प्रकृति के अनुसार बढता है, उसी प्रकार बालक भी स्वय पूर्णता को प्राप्त करता है बशर्ते की एक माली की भांति वह स्वयं ही देखभाल चाहता है। स्वामी जी के अनुसार विभिन्न उपाधियों को एकत्रित करके मात्र दूसरों के विचारों को सैद्धान्तिक तौर पर रटकर कोई व्यक्ति अपने को शिक्षित नहीं कहला सकता है। क्या यही शिक्षा है जो मनुष्य को जीवन संग्राम के लिये तैयार नहीं करती, उनके चरित्र के विकास में सहयोग नहीं देती, उनमें प्रेम, दया आदि की भावना का समावेश नहीं करती, वह शिक्षा नहीं कही जा सकती। उन्होंने शिक्षा का व्यापक एवं व्यावहारिक अर्थ लिया शिक्षा को एक ऐसा ज्ञान माना है जिससे व्यक्ति को अपना शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास करने में सहयोग मिलता है।

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

शिक्षा के उद्देश्य

स्वामी जी आदर्शवादी विचारक थे, चूँकि जीवन का आदर्श दर्शन होता है इसलिए उनके द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के उद्देश्यों पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव है लेकिन उन्होंने प्रकृति और यथार्थ को नहीं ठुकराया। मन में समस्त झुकाओं और सभी प्रकार की प्रकृतियों का समान्यव चरित्र है। सुख–दुःख व्यक्ति की आत्मा पर अपनी छाप छोड़ जाते हैं। इस सभी प्रकार की छापों का समष्टि चरित्र है। विचारों से ही मनुष्य बनता है। अच्छे शब्द सुनने वाला, अच्छे विचार सोचने वाला, अच्छे संस्कार से युक्त होता है और इच्छा न होते हुये भी सत्य कार्य करने के लिए विवश हो जाता है। जब व्यक्ति संस्कारवश अच्छे कार्य करता है तभी उसका चरित्र गठित हो जाता है यही चरित्र गठन शिक्षा का उद्देश्य है।इस प्रकार शिक्षा के उद्देश्य का महत्व प्राचीन समय से लेकर आधुनिक समय तक बना हुआ है अन्ततः देखा जाये तो स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा के उद्देश्यों की प्रासंगिकता प्राचीन समय से लेकर आधुनिक समय तक थी, है और आगे भी रहेगी।

पाठ्यक्रम

स्वामी जी के अनुसार पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसमें निषेधात्मकता न हो। छात्रों के समक्ष विधात्यमक या भावात्मक विचार रखने चाहिए न कि अभावात्मक निषाधात्मक देश को सफल एवं उन्नत बनाने के लिए जिन–जिन विषयों पढ़ाने की आवश्यकता होवे विषय अवश्य पढ़ाये जाये।

वेदों को उन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान दिया। अतः वेदों का अध्ययन भी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत रखा और वैदिक मंत्रों की मेघ गर्जना द्वारा भारत में प्राणों का संचार करने को कहा। स्वामी जी ने संगीत, धार्मिक एवं उपनिषदों को शिक्षा के साथ–साथ मानव जीवन का महत्वपूर्ण अंग माना है। स्वामी जी ने पाठ्यक्रम को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

- लौकिक
- आध्यात्मिक

लौकिक विषय जहाँ व्यक्ति को भौतिकता की ओर ले जाते हैं, वहीं आध्यात्मिक विषय आत्मानुभूति की पराकाष्ठा तक पहुँचाते हैं। स्वामी जी के अनुसार पाठ्यक्रम ऐसा हो जो बालक को सदा आगे बढ़ने की प्रेरणा देता रहे, किन्तु पाठ्यक्रम को सदा उच्च नैतिकता एवं उदात्त आदर्शों से युक्त होना ही चाहिए। इस प्रकार समाज की वर्तमान कार्य शैली को देखकर इसकी प्रासंगिकता का महत्व बढ़ जाता है।

शिक्षण विधि

स्वामी जी ने शिक्षा की जो शिक्षण विधियाँ निर्धारित की हैं वे स्वयं में वैशिष्टता लिये हुये हैं उनकी शिक्षण विधि धर्म से भी ओत–प्रोत है व आध्यात्मिकता का रुप धारण किये हुये है। उनकी शिक्षण विधि चित्त की इच्छाओं का हनन करके मस्तिष्क को स्वीकृत करके शिक्षण देने पर बल देती है। उन्होंने योगों के माध्यम से चित्त की प्रकृतियों को एकाग्र करने पर बल दिया है। मनुष्य का मन एकाग्र होने पर भी भ्रमित हो जाता है तथा निश्चित वस्तु को ग्रहण करने में अक्षम साबित होता है।

एकाग्रता ही शिक्षण हो सकता है किसी अन्य विधि द्वारा नहीं। स्वामी जी ने शिक्षण विधियों में मुख्यतः केन्द्रीयकरण को महत्व दिया है।इसमें व्यक्तिको अपनी चंचलता को दूर करके स्वयं को एकाग्रचित करना पड़ता है। इस प्रकार स्वामी जी ने कुछ शिक्षण विधियों की ओर भी दृष्टिपात किया है जैसे–चर्मकार जूता अच्छा बनाता है, रसोईयाँ भोजन अच्छा बनायेगा, अर्थोपार्जक पैसा अधिक कमायेगा, ईश्वरोपाशक अराधना अधिक करेगा तथा अध्यापक एकाग्रचित है तो अच्छा ज्ञान देगा

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved. ISSN: 2581-4044

और विद्यार्थी एकाग्रचित है तो अच्छा श्रवण करके ज्ञानार्जन करेगा। इस प्रकार इसकी प्रासंगिकता प्राचीन समय से लेकर तात्कालिक समय तक बनी हुई है और रहेगी।

शिक्षा का माध्यम

शिक्षा का माध्यम एक ऐसी समस्या है जो आज तक विकराल रुप धारण करती जा रही है। वैदिक युग में शिक्षा का माध्यम संस्कृत थी। शनैः शनैः इसमें परिवर्तन आया और एक ऐसा समय आया जबकि ब्रिटिश शासक ने संस्कृत के अस्तित्व को समाप्त कर शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी को बना दिया। अंग्रेजों ने प्राचीन शिक्षा प्रणाली को धाराशायी कर दिया।

स्वामी विवेकानन्द ने अपने द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बताया। उनके अनुसार शिक्षा मातृभाषा द्वारा प्रदान की जाय' शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को स्वीकार करते हुये उन्होंने कहा–

''विदेशी भाषा की अपेक्षा स्वदेशी भाषा पर पहले अधिकार करना चाहिये क्योंकि स्वदेशी भाषा का अपने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। मातृभाषा पर अधिकार कर लेने के बाद विदेशी भाषा का अध्ययन हो सकता है लेकिन विदेशी भाषा शिक्षा का माध्यम नही हो सकती है। उन्होंने शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को स्वीकार किया। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है की स्वामी जी ने शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जबकि उन्होंने अन्य भाषाओं की अवहेलना नही की परन्तु उन्हें शिक्षा के माध्यम के रुप में स्वीकार नहीं किया लेकिन मातृभाषा के साथ–साथ अन्य भाषाओं की भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया है जो कि वर्तमान समय में भी दिखाई देता है।

शिक्षक

शिक्षक के महत्व को प्रतिपादित करते हुये कहा गया है–

'गुरू ब्रह्मा, गुरू: विष्णु, गुरू: देवो महेश्वरा, गुरू: साक्षात् परब्रह्मा तस्मैश्री गुरुवेनम:।।

नि:सन्देह स्वामी जी ने भी शिक्षा की प्रक्रिया में गुरू की महत्ता बतलायी है। अध्यापक में उन सभी गुणों का होना आवश्यक है जो व्यक्ति को उच्च चरित्र, उत्तम व्यक्तित्व प्रदान करते हैं। स्वामी जी के अनुसार शिक्षा 'गुरु गृह वास' है। शिक्षक अर्थात गुरू के व्यक्तिगत जीवन के बिना कोई शिक्षा नहीं हो सकती है शिष्य को बाल्यअवस्था में ऐसे व्यक्ति के साथ रहना पड़ता है जो पवित्र हो। शिक्षक का चरित्र अग्नि के समान प्रकाशमान हो जिसमें उच्चतम शिक्षा का सजीव आदर्श शिष्य के समान रहे और उच्चतम आदर्शों को सच्ची मूर्ति होना चाहिये। उसे ज्ञान के दान के लिये सदैव तत्पर रहना चाहिये। ज्ञान का दान बिना त्याग के नहीं हो सकता। अत: उसे त्यागी भी होना चाहिये। वर्तमान समय में शिक्षक अपने गरिमापूर्ण व्यवहार को दूषित करता हुआ दिखाई दे रहा है अत: इसके व्यवहार को गरिमापूर्ण बनाने हेतु स्वामी विवेकानन्द के विचारों को आत्मसात कर शिक्षा प्रदान करना चाहिए।

अनुशासन

इस प्रकार अनुशासन के बारे में स्वामी जी ने कहा कि मारपीट, भय, दण्ड आदि के द्वारा बालक को अनुशासित नहीं करना चाहिये। उनके अनुसार अनुशासन के संदर्भ में शिक्षक को मुक्तयात्मक सिद्धान्त को मानना चाहिये। अनुशासन स्थापित करने के लिये बच्चों को पूर्ण स्वतंत्र छोड़ना चाहिये और उन्हें अपनी मूल शक्तियों, रूचियों, स्थानों और योग्यता अनुसार विकास के पूर्ण अवसर देने चाहिये।

© Eureka Journals 2018. All Rights Reserved.
ISSN: 2581-4044

उसी स्थिति में हो बच्चे सही आचरण करते हैं। दूसरी तरफ स्वामी जी ने यह भी कहा कि विद्यार्थी में ब्रह्मचर्य का गुण हो तथा वह अपनी ज्ञानेन्द्रियाँ एवं कर्मेन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखे। उन्होंने अनुशासन स्थापित करने के लिये कहा कि ब्रह्मचर्य द्वारा ही ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखे। उन्होंने अनुशासन स्थापित करने के लिये कहा कि ब्रह्मचर्य द्वारा ही ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों पर नियंत्रण संभव है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति इन्द्रियों पर नियंत्रण रखने में आंशिक रूप से सफल हो जाता है। यह एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें बालक एकाग्रता की चरम सीमा पर पहुँचकर स्वयं को ब्रह्म मानने लगता है उन्होंने इन्द्रियों को बेलगाम नहीं छोड़ा है। संयम, दान, ज्ञान, त्याग, तप, उपासना, व्रत इत्यादि इन्द्रियों के नियंत्रण के आधार है। जो तात्कालिक समय में शिक्षा शिक्षक केन्द्रित से हटाकर बाल केन्द्रित कर दी गई है जो कि इनके विचारों में दिखाई देता है।

धार्मिक शिक्षा

धर्म–शिक्षा स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का अन्तरतम केन्द्र धर्म बताया है स्वामी विवेकानन्द के अनुसार "धर्म तथ्य का प्रश्न है न कि वार्तालाप का। हम लोग अपनी आत्मा का विश्लेषण करना पसंद करते है और पता लगाते है कि वहाँ क्या है। हम लोग जो समझना पसंद करते है और जो कुछ समझते है उसकी अनुभूति करते है। यही धर्म है किसी भी मात्रा में वार्तालाप करने से धर्म नहीं बनता है।" स्वामी विवेकानन्द ने ब्रह्मचर्य को प्रमुखता दी है इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्मचर्य के बल पर शरीर और मन दोनों बलवान होते हैं। ब्रह्मचर्य का पालन और धारण करना धर्म शिक्षा के अन्तर्गत आता है इसके लिये माता–पिता, गुरु और समाज उत्तरदायी है तथा व्यक्ति को स्वयं अभ्यास करने की आवश्यकता है। इससे स्पष्ट है कि विवेकानन्द के अनुसार धर्म एक तप और साधना है उसकी शिक्षा का एक क्रम भी है। विवेकानन्द ने कहा है कि धर्म तो व्यक्ति में पुरुषत्व लाता है वास्तविक रूप में धर्म धारण करने के लिए स्वामी जी का कथन है कि तुम क्यों विरोधों में लगते हो। विभिन्न मतों की बातों को बर्दाश्त करें। धैर्य, शुद्धता और सहनशीलता, विजयी होकर रहेंगे वस्तुतः धर्म इन्हें ही धारण करके कार्य करने में होता है। धार्मिक शिक्षा प्रत्येक बालक को चमकदार, वीर और प्रत्येक लड़की को प्रकाशयुक्त वीरनी बना देता है। धर्म हर एक को निर्भर बना देता है। भारत की दुर्दशा देखकर स्वामी विवेकानन्द ने धर्म शिक्षा को अनिवार्य रूप से देने के लिये कहा और यही कारण था कि उन्होंने धर्म शिक्षा का प्रचार न केवल भारत में ही किया बल्कि विदेशों में भी किया और हमारे देश में ही नहीं बल्कि अन्यत्र भी धर्म शिक्षा की आवश्यकता और महत्ता अनुभव की जा रही है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

[1]. ओड, डा0 लक्ष्मीकान्त (1973) शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, जयपुरः राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

[2]. चौबे, डा0 सरयू प्रसाद, डा0 अखिलेश (2006) आधुनिक शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, इलाहाबादः शारदा पुस्तक भवन।

[3]. त्यागी, डा0 गुरुशरण दास (2008) शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधार, आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।

[4]. निगम, शोभा (1977) पाश्चात्य दर्शन के सम्प्रदाय, दिल्लीः मोतीलाल बनारसी दास प्रकाशन।

[5]. पाण्डेय प्रो0 राम शकल (1936) शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।